साधुत्व के आदर्श प्रतिमान

□ डॉ० महावीरमल लोढ़ा

सामायिक और स्वाध्याय के प्रबल प्रेरक आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा० को मैं साधुत्व का आदर्श प्रतिमान मानता हूँ। बचपन में मुझे आचार्य श्री का सान्निध्य अपने पिता श्री और दादा श्री के माध्यम से प्राप्त हुआ किन्तु जीवन के संघर्षों में इतना उलझ गया कि फिर आचार्य श्री का सान्निध्य मैं प्राप्त नहीं कर सका। बचपन से ही मैं यह मानता रहा हूँ कि आचार्य श्री साधुत्व के आदर्श प्रतिमान के रूप में इस युग के महान् जैनाचार्य प्रतिष्ठित हुए।

भगवान महावीर ने साधु की सही परिभाषा दी है। उनके अनुसार साधु सिंह के समान पराक्रमी, हाथी के समान स्वाभिमानी, वृषभ के समान भद्र, मृग के समान सरल, वायु के समान निस्संग, सूर्य के समान तेजस्वी, सागर के समान गम्भीर, मेरु के समान निश्चल, चन्द्रमा के समान शीतल, आकाश के समान निरवलम्ब मोक्ष की खोज में रहता है। आचार्य श्री इस निष्कर्ष पर पूर्णतः खरे उतरते हैं।

आचार्य श्री साधुत्व के चरम-शिखर थे जिन्होंने आने वाली पीढ़ियों के लिए साधुत्व का आदर्श स्थापित किया। इस फक्कड़ संत में कर्म, ज्ञान और भक्ति की त्रिवेणी प्रवाहित होती थी।

आचार्य श्री ने अपने जीवन और कृतित्व के आधार पर यह बता दिया कि केवल सिर मुंडाने से कोई श्रमण नहीं होता, ओम् का जप करने से कोई ब्राह्मण नहीं होता, कुश चीवर धारण करने से कोई तपस्वी नहीं होता, वह समता से श्रमण होता है, तप से तपस्वी होता है और गुणों से साधु होता है। आचार्य श्री ने अपने जीवन के आधार पर बता दिया कि साधु वह है जो लाभ और अलाभ में, सुख और दुःख में, जीवन और मरण में, निन्दा और प्रशंसा में, मान और अपमान में समभाव रखता है। जो देह आदि ममता से रहित है, मान आदि कषायों से पूरी तरह मुक्त है और जो आत्मा में ही लीन है, वही सच्चा साधु है।

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org

समता भाव के कारण आचार्य श्री सच्चे श्रमण थे, तप के कारण तपस्वी थे, ज्ञान के कारण मुनि थे, गुणों से साधु थे। आचार्य श्री सचमुच जैन-जगत के आलोकमान भास्कर, श्रमण संस्कृति के महा कल्पवृक्ष, महा-मनीषी प्रज्ञा-पुरुष, इतिहास-पुरुष, युगांतकारी विरल विभूति सिद्ध पुरुष, अहिंसा, दया और करुणा के सागर, ज्ञान के शिखर, साधना के शृंग, युग द्रष्टा और युगस्रष्टा थे।

—सी-७, भागीरथ कॉलोनी, चौमूं हाउस, जयपुर-१

गजेन्द्र प्रवचन-मुक्ता

- सर्वजनहिताय—सबके हित के लिये जो काम किया जाय वही अहिंसा है।
- यदि अहिंसा को देश में बढ़ावा देना है तो उसके लिये संयम जरूरी होगा।
- संयम में रही हुई आत्मा मित्र और असंयम में रही हुई आत्मा शत्रु है।
- सिद्धि में रुकावट डालने वाला आलस्य है, जो मानव का परम शत्रु है।
- आनन्द भौतिक वस्तुओं के प्रति राग में नहीं, उनके त्याग में है।
- कामना घटाई नहीं कि अर्थ की गुलामी से छुटकारा मिला नहीं।
- तपस्वी वह कहलाता है जिसके मन में समता हो।
- दान तब तक दान नहीं है जब तक कि उसके ऊपर से मम भाव विसर्जित न हो।
- धर्म की साधना में कुल का सम्बन्ध नहीं, मन का सम्बन्ध है।
- किसी के पास धन नहीं है, पर धर्म है तो वह परिवार सुखी रह सकता है।
- मन, वचन और काया में शुभ योग की प्रवृत्ति होना पुण्य है।
- भावहीन क्रिया फल प्रदान नहीं करती। भाव क्रिया का प्राण है।
- श्रावक-समाज के विवेक से ही साधु-साध्वियों का संयम निर्मल रह सकता है।
- मरण-सुधार जीवन-सुधार है और जीवन-सुधार ही मरण-सुधार है।

—आचार्य श्री हस्तीमलजी म० सा०

Jain Educationa International For Personal and Private Use Only www.jainelibrary.org